बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 251

जीएसटी में सुधार

ऐसी खबरें हैं कि वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) परिषद, जिसमें राज्यों और केंद्र के वित्त मंत्री शामिल होते हैं और जो जीएसटी की निगरानी करती है, वह अप्रत्यक्ष कर ढांचे की समीक्षा करने पर विचार कर रही है।

खासतौर पर जैसा कि इस समाचार पत्र ने लिखा भी था कि 5 फीसदी की दर को बढ़ाकर 6 फीसदी किया जा सकता है। सरकार को उम्मीद है कि इससे कर का प्रभाव बढ़ेगा। फिलहाल यह 1.2 लाख करोड़ मासिक के तय लक्ष्य से काफी कम है। परंतु निचली कर दर में मामूली इजाफा करके इस कमी को पूरा नहीं किया जा सकता। ऐसा इसलिए क्योंकि 5 फीसदी की दर कुल जीएसटी संग्रह का केवल 5 फीसदी ही है। परिषद का इरादा समझा जा सकता है लेकिन यह भी स्पष्ट है कि इससे बहुत मामूली फर्क पड़ेगा।

जीएसटी को यदि व्यापक मंदी से जोड़कर देखें तो इसने राजकोषीय संकट को भड़काया है और उससे बेहद सावधानीपूर्वक निपटना होगा। हालांकि राजस्व में काफी कमी रह जाने की उम्मीद है लेकिन फिलहाल अप्रत्यक्ष कर दर में इजाफा अर्थव्यवस्था के माहौल को और उदासीन कर सकता है। केंद्रीय वित्त मंत्री ने राज्यों को आश्वस्त किया है कि जीएसटी की क्षतिपूर्ति देने का सिलसिला जारी रहेगा। जीएसटी राजस्व यदि सालाना 14 फीसदी की दर से नहीं बढ़ता है तो केंद्र सरकार कानूनी रूप राज्यों को हर्जाना देने के लिए बाध्य है। चूंकि फिलहाल ऐसा नहीं हो रहा है और केंद्र भी भुगतान नहीं कर रहा है इसलिए हर्जाने का बकाया बढ़ता जा रहा है। यदि राज्यों को हजारों करोड़ रुपये का बकाया नहीं चुकाया गया तो उन्हें मजबूरन उधार लेना होगा, इससे सरकार का घाटा और बढ़ेगा तथा निजी क्षेत्र की वृद्धि और निवेश के लिए उपलब्ध फंड में और कमी आएगी। सरकार जीएसटी के बाद क्षतिपूर्ति उपकर भी लगाती है। यह राज्यों को किए जाने वाले भुगतान के लिए है लेकिन इस तरीके से भी जरूरत से कम राशि ही आ रही है। खबरों के मुताबिक क्षतिपूर्ति उपकर में इजाफे पर भी विचार किया जा रहा है।

कई लोगों ने जहां प्रस्तुति के वक्त इस खामीयुक्त जीएसटी का स्वागत किया था लेकिन यह स्वीकृति सशर्त थी और कहा गया था कि इसे आदर्श और किफायती बनाने तक इसमें संशोधन किए जाएंगे। इसे तार्किक और सहज बनाने का काम अब और अधिक नहीं टाला जा सकता है।

ऐसे में यह आवश्यक है कि अब मामूली छेड़छाड़ के बजाय जीएसटी में गहन सुधार पर विचार किया जाए। इसके साथ ही सरकार की राजकोषीय स्थिति पर भी करीबी नजर डालने की आवश्यकता है। कहीं अधिक बुनियादी समस्याओं को भी दूर किए जाने की आवश्यकता है। यह भी संभव है कि समुचित इनवॉइस मिलान व्यवस्था के अभाव में कर वंचना के मामले बढ़ रहे हों। यदि ऐसा है तो मंदी के दौर में आंख मूंदकर इनवॉइस मिलान का क्रियान्वयन भी खतरनाक हो सकता है। ऐसा इसलिए कि इससे लेनदेन की लागत में इजाफा हो सकता है। जीएसटी परिषद को बुनियादी चीजों पर काम करते हुए यह समझना होगा कि जीएसटी के पीछे आर्थिक समझ यह है कि यह कर चुकाना इतना आसान बना देगा कि वंचना के मामले कम हो जाएंगे। इसके लिए सहज, स्पष्ट और पारदर्शी कर व्यवस्था की आवश्यकता होगी।

आदर्श रूप में यह एकल दर होनी चाहिए। कम से कम अब सभी कर दरों को तार्किक बनाने पर काम शुरू होना चाहिए। इसके अलावा अब जबकि जीएसटी संग्रह को लेकर पर्याप्त आंकड़े हैं तो इस बात का समुचित अध्ययन होना चाहिए कि राजस्व निरपेक्ष दर आखिर क्या हो?

अजय मोहंती

सीएबी-एनआरसी का लक्ष्य बांटो और जीतो

सीएबी और एनआरसी का विचार शुरुआत से ही एक नाकाम विचार है। परंतु भाजपा के लिए यह अगला राम मंदिर है जिसका वह इस्तेमाल करेगी।

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

सात दशकों से पाकिस्तान का सत्ता प्रतिष्ठान एक ही राग अलाप रहा है: 'कश्मीर विभाजन का एक अधूरा मसला है। उसे हल करने के बाद भारत और पाकिस्तान मित्रवत रह सकते हैं। ठीक कनाडा और अमेरिका की तरह।'

भारत भी इसका जवाब एक ही सुर में देता आया है: 'विभाजन अंतिम था और हो चुका है। कोई मूर्ख या आत्मघाती प्रतिशोधी ही उस घाव को दोबारा खोलना चाहेगा।'

अब भारत के हिस्से की पटकथा बदल रही है। बीते कई दिनों के दौरान हमने नागरिकता अधिनियम 1955 या नागरिकता संशोधन विधेयक, 2019 (सीएबी) के समर्थकों को विभाजन की बात करते सुना। वे अधूरा मसला जैसी बातें नहीं करते लेकिन वे पूर्ण न्याय, निपटारे तथा गैर मुस्लिम अल्पसंख्यकों को न्याय की बात करते हैं। उनका कहना है कि सीएबी पाकिस्तान और बांग्लादेश के अल्पसंख्यकों से वादा निभाने का जरिया है। वह वादा क्या था, इस पर बहस हो सकती है। इसमें दोराय नहीं कि पहले पाकिस्तान की परिकल्पना की गई, उसके लिए लड़ाई लड़ी गई और उपमहाद्वीप के मुस्लिमों के लिए उसे घर के रूप में हासिल किया गया। परंतु इसका यह अर्थ नहीं था कि भारत उनका घर नहीं रहेगा।

यह भी सही है कि धार्मिक आधार पर एक बड़ी आबादी की अदला-बदली हुई। इस दौरान खूनखराबा और बलात्कार भी हुए। पश्चिमी इलाके में यह लेनदेन कुछ वर्षों में पूरा हो गया। भारतीय पंजाब में बहुत कम मुस्लिम और पाकिस्तानी पंजाब में बहुत कम हिंदू या सिख बचे। कुछ मामले सन 1960 के दशक के मध्य तक चले। मसलन क्रिकेटर आसिफ इकबाल जो पाकिस्तानी क्रिकेट टीम के कप्तान बने, वह सन 1961 में वहां गए। तब तक वह हैदराबाद की टीम से खेलते थे, जिसके कप्तान बाद में टाइगर पटौदी बने। सन 1965 की जंग के बाद लोगों की आवाजाही में क्षणिक तेजी आई और समाप्त हो गई।

परंतु पूर्व में मामला अलग था। इसकी कई जटिल वजह हैं। पूर्वी पाकिस्तान और भारत के पश्चिम बंगाल, असम और त्रिपुरा में आबादी की अदला-बदली जल्दी समाप्त नहीं होने वाली थी। बंगाली मुस्लिम बड़ी तादाद में भारत में रह गए और पूर्वी बंगाल (पाकिस्तान) के हिंदू वहीं बने रहे। लेकिन दंगे और लोगों की यदाकदा आवाजाही चलती रही। सन 1950 में इसे रोकने के लिए तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और पाकिस्तानी प्रधानमंत्री लियाकत अली खान ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किए जिसे नेहरू-लियाकत समझौता कहा जाता है। इस समझौते के पांच अहम स्तंभ थे:

1. दोनों देशों ने यह प्रतिबद्धता जताई कि वे न केवल अपने अल्पसंख्यकों की रक्षा करेंगे बल्कि उन्हें सरकारी नौकरी, राजनीति और सशस्त्र बलों में सभी अधिकार और आजादी देंगे।

2. जो लोग दंगों के कारण अस्थायी रूप से विस्थापित हुए और अपने घर लौटना चाहते हैं उन्हें पूरी सुविधा और संरक्षण प्रदान किया जाएगा।

3. जो अपने घर लौटना नहीं चाहते उन्हें किसी भी अन्य प्रवासी की तरह नागरिक स्वीकार किया जाएगा।

4. इस बीच दोनों पक्षों में उन लोगों को पूरी आजादी होगी जो अभी भी दूसरी ओर जाना चाहते हैं। उन्हें पूरी सहायता और संरक्षण दिया जाएगा।

5. दोनों पक्ष कानून व्यवस्था सुनिश्चित करने के गंभीर प्रयास करेंगे ताकि लोग सुरक्षित महसूस करें।

इसके बाद ही भारत ने सन 1951 में पहला (और अब तक अंतिम) राष्ट्रीय नागरिक पंजी (एनआरसी) बनाया। सीएबी की बहस में हम अक्सर भाजपा नेताओं को नेहरू-लियाकत समझौते का जिक्र करते सुनते हैं। वे कहते हैं कि भारत ने अपनी प्रतिबद्धता निभाई लेकिन पाकिस्तान ने नहीं। इस पर बहस करना कठिन है। आबादी के आंकड़े बताते हैं कि भारत में मुस्लिमों की कुल आबादी बढ़ी है। यह बढ़ोतरी हिंदुओं और सिखों की वृद्धि दर से भी तेज रही है। जबकि पाकिस्तान वाले हिस्सों में अल्पसंख्यकों की आबादी तेजी से घटी। माना जा सकता है कि उन्होंने पाकिस्तान छोड़ना और भारत में बसना जारी रखा।

यही कारण है कि भाजपा सीएबी को विभाजन के अधूरे एजेंडे का जवाब बताती है। उसका कहना है कि पाकिस्तान ने नेहरू-लियाकत समझौते में अपना वादा नहीं निभाया और इसलिए भारत उन गैर मुस्लिम अल्पसंख्यकों का स्वाभाविक घर बनता गया। उधर, इस्लामिक देशों में मुस्लिमों के प्रताड़ित महसूस करने की कोई वजह नहीं है।

यहां जटिलताओं की शुरुआत होती है: पहली बात, भारत के संस्थापक अपने धर्मनिरपेक्ष गणराज्य को जिन्ना का द्विराष्ट्र सिद्धांत की तरह ढालना नहीं चाहते थे। दूसरा, पुराना इतिहास किस बिंदु पर समाप्त होता है नया शुरू होता है? तीसरी बात यह कि क्या 'राष्ट्रीय' और 'स्थानीय' एक दूसरे के पर्याय हैं? क्या 'धर्म' को 'जातीयता' और 'भाषा' का पर्याय माना जा सकता है?

चूंकि हमने नये और पुराने इतिहास पर सवाल उठाए हैं तो हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम कुछ दशक पीछे जाकर पूर्वी इलाके, खासकर असम में हुए स्थानांतरण की प्रकृति और जटिलता को समझें।

असम की आबादी घनी नहीं थी और वहां प्रचुर मात्रा में उर्वर जमीन और जल संसाधन मौजूद थे। इसके कारण 20वीं सदी के आरंभ में पूर्वी बंगाल से बड़ी तादाद में लोग यहां आकर बसे। इनमें से अधिकांश आर्थिक कारणों से जमीन और आजीविका की तलाश में आए। इसके लिए 'घुसपैठ' शब्द का पहला प्रयोग सन 1931 में असम के जनगणना कार्य के ब्रिटिश अधीक्षक सी एस मुल्लन ने किया था।

मुल्लन ने लिखा, 'इस प्रांत में बीते 25 वर्षों की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना जो समूचे असम के भविष्य को हमेशा के लिए बदल सकती है और असमिया सभ्यता और संस्कृति को पूरी तरह नष्ट कर सकती है वह है जमीन के भूखे प्रवासियों की घुसपैठ, इनमें ज्यादातर पूर्वी बंगाल और खासकर मेमनसिंह से आए मुस्लिम।' उन्होंने इसका भयानक चित्रण करते हुए लिखा, 'जहां कंकाल पड़ा होगा वहां गिद्ध जुट जाएंगे और जहां कहीं भी खाली जमीन होगी वहां मेमनसिंह वाले एकत्रित हो जाएंगे।' असम के लोगों की भाषाई और जातीय चिंता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है।

यदि असम में मुस्लिमों का आर्थिक देशांतर बहुत पहले मुद्दा बन गया था, वहीं विभाजन के बाद हिंदू भी इसमें शामिल हो गए। सन 1947 के पहले आए मुस्लिम यहीं टिक गए और इसके बाद प्रताड़ित हिंदुओं के झुंड के झुंड यहां आए और पूरे क्षेत्र का जातीय संतुलन बदल गया।

यही समस्या का मूल है और इसके चलते ही सीएबी असम की चिंताओं का उत्तर देने मे नाकाम है। वहां असली चिंता धार्मिक नहीं बल्कि जातीय, सांस्कृतिक, भाषाई और राजनीतिक है। आरएसएस और भाजपा ने बीते तीन दशक में इसे बदलने का प्रयास किया है। मैंने इस बारे में लिखा भी है। ज्यादातर मुस्लिम प्रवासी पुराने और विभाजन के पहले के हैं, उन्हें नागरिकता से वंचित नहीं किया जा सकता। बंगाली हिंदू वहां सबसे नये हैं। यही कारण है कि जिन 19 लाख लोगों को एनआरसी में छांटा गया उनमें 60 फीसदी गैर मुस्लिम हैं।

यहां भाजपा के समक्ष भीषण विरोधाभास है। यदि वह इंदिरा गांधी और मुजीबुर रहमान के समझौते के मुताबिक 25 मार्च, 1971 को कटऑफ मानती है तो मुस्लिमों से अधिक हिंदू इसमें फंसेंगे। यदि सरकार इससे पीछे जाना चाहती है तो कितना पीछे जाएगी?

भाजपा ने इसे अद्यतन सीएबी से हल करने का प्रयास किया है। असम के लोग इसे स्वीकार नहीं करेंगे। छठी अनुसूची में जनजातीय राज्यों और असम के जिलों को संरक्षण देने की बात शामिल है लेकिन उसके चलते असम के स्थानीय लोगों को और अधिक बंगाली हिंदुओं को स्वीकार करना होगा। सामान्य परिस्थितियों में हम यहां भाजपा के लिए सर वॉल्टर स्कॉट की उक्ति का प्रयोग कर सकते थे: 'ओह! धोखा देने के पहले प्रयास में हम कितना महीन जाल बुनते हैं!' परंतु भाजपा यह भी जानती है कि सीएबी को नई देशव्यापी एनआरसी प्रक्रिया से जोड़कर देखें तो यह यह एकदम विफल विचार है। जहां यह लागू भी है वहां यह एक विभाजनकारी, ध्रुवीकरण करने वाला विचार है। इसके विरोधियों को इसके खिलाफ खड़ा होना पड़ रहा है और इस पर 'मुस्लिम तुष्टीकरण' का आरोप लग सकता है। यह अगले तीन दशकों के लिए अनुच्छेद 370 या राम मंदिर जैसा मुद्दा बन सकता है।

भारतीय कॉर्पोरेट जगत मुखर होने से हमेशा करता रहा है परहेज

इंसानी पहलू

श्यामल मजूमदार

राहुल बजाज की टिप्पणी के बाद उथल-पुथल सी मच गई है। पिछले दिनों बजाज ने एक कार्यक्रम के दौरान कहा था कि भारत का उद्योग जगत सरकार की आलोचना करने से डरता है। इस बयान के बाद प्रतिक्रियाओं का दौर शुरू हो गया और सबसे अपरिपक्व बयान सरकार के वरिष्ठ मंत्रियों की तरफ से आए हैं। इन मंत्रियों ने बजाज पर अनर्गल बातें करने और मोदी सरकार के दामन पर कीचड़ उछालने का आरोप लगाया। एक मंत्री ने कहा कि ऐसे बयानों से राष्ट्र हित को नुकसान पहुंचता है, वहीं भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के एक वरिष्ठ नेता ने तो बजाज को 'उनकी राजनीतिक निष्ठा खुलकर प्रकट करने और भय तथा अविश्वास जैसे शब्दों की ढाल उतारने की नसीहत थमा दी।' सरकार के मंत्रियों और भाजपा नेताओं की कटु प्रतिक्रियाओं की एक वजह यह थी कि बजाज ने यह बात अमित शाह जैसे ताकतवर नेता की उपस्थिति में कही थी। दूसरी तरफ स्वयं शाह की प्रतिक्रिया काफी सधी रही और इसके लिए उनकी सराहना की जानी चाहिए।

निष्ठा का प्रदर्शन अच्छी बात है, लेकिन क्या इसका प्रकटीकरण सदैव जरूरी होता है। अगर बजाज के बयान के बाद थोड़ी भी सूझबूझ का परिचय दिया गया होता तो सरकार के मंत्री और भाजपा नेता यह बखूबी समझ जाते कि भारत में हरेक सरकार को ऐसे सत्य या मिथ्या आरोपों से रूबरू होना पड़ा है। इस पूरे मामले पर हड़बड़ाहट में प्रतिक्रियाएं देने से पहले उन्हें आपस में इस बात पर विचार करना चाहिए था कि देश में उद्योग एवं अफसरशाही में किस तरह सुधार किए जा सकते हैं। वैसे भी यह सरकार दूसरी सरकारों से अपनी छवि अलग होने का दावा करती रही है। दूसरी तरफ अगर बजाज अगर इतिहास के पन्ने पलटें तो वह यह महसूस करेंगे कि देश में भय का माहौल या विश्वास का अभाव कोई नई बात नहीं है। पिछले कई वर्षों से देश का उद्योग जगत तत्कालीन सरकारों की आलोचना करने की जहमत नहीं उठा पाया है, इसलिए केवल मौजूदा सरकार पर दोष मढ़ना शायद तर्कसंगत नहीं माना जाएगा। राजीव गांधी सरकार में जब विश्वनाथ प्रताप सिंह वित्त मंत्री थे तो तब क्या हालत थी। कालेधन का पता लगाने के लिए सिंह ने उस समय देश के कुछ सबसे प्रतिष्ठित औद्योगिक घरानों के खिलाफ जांच एवं छापेमारी करने के आदेश दिए थे। जांच एजेंसियों के कर्मी उस समय एक दिग्गज उद्योगपति एस एल किर्लोस्कर के घर आधी रात पहुंच गए। यह बरताव कुछ ऐसा ही था जैसा तुच्छ अपराधियों के खिलाफ होता है। उस समय देश के उद्योग जगत में सरकार के विद्वेष के खिलाफ आवाज उठाने वाला शायद ही कोई था।

पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अगले दिन कहा कि 'देश में आर्थिक भागीदारों के बीच भय एवं भरोसे की कमी से आर्थिक विकास थम गया है।' यह वक्तव्य सही हो सकता है, लेकिन यही आरोप संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार पर भी लगाए जा सकते हैं। बजाज उस समय भी अपनी आवाज उठा सकते थे, लेकिन उद्योग जगत के ज्यादातर लोग परोक्ष में ही कानाफूसी करते रहे और कोई भी बात अपनी बात दमदार तरीके से रखने के लिए आगे नहीं आया। केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) जैसी एजेंसियों को कई बार सर्वोच्च न्यायालय की फटकार झेलनी पड़ी है। इन एजेंसियों पर अक्सर सत्ता में मौजूद लोगों के इशारों पर काम करने या अपने कार्य के निष्पादन में गंभीरता नहीं बरतने के आरोप लगते रहे हैं। एक के बाद एक सरकारों पर अपने राजनीतिक विरोधियों एवं कुछ मामलों में अपने सहयोगियों, कुछ खास अधिकारियों एवं उद्योगपतियों को जान बूझ कर परेशान किए जाने के आरोप लगते रहे हैं।

एक बार राज्यसभा में बतौर नेता प्रतिपक्ष अरुण जेटली ने कहा था कि कानून निर्माताओं, सीबीआई और विधि अधिकारियों के आपसी संबंध संप्रग सरकार के दौरान न्याय के लिए एक त्रासदी साबित हुआ है। जब वाई एस राजशेखर रेड्डी का कांग्रेस में रुतबा था तो सीबीआई ने उनके भ्रष्टाचार के बाद भी आंखें मूंद ली। इसके बाद वाई एस जगन मोहन रेड्डी ने कांग्रेस से जब नाता तोड़ा तो सरकार ने सीबीआई को उनके पीछे छोड़ दिया। इसके बाद हुई एक घटना ने एक बार फिर बहस छेड़ दी। सीबीआई ने विदेश से अवैध रूप में कार आयात करने के मामले में द्रमुक नेता एम के स्टालिन के घर छापा मारा था। यह छापेमारी तब हुई जब द्रमुक संप्रग सरकार से बाहर हो गई थी।

आखिकार संप्रग सरकार के कार्यकाल में ही सीबीआई पर 'पिंजरे का तोता' होने का तमगा लगा था। वर्ष 2013 में न्यायमूर्ति बी एम लोढ़ा ने कोयला खदान आवंटन मामले की जांच में सीबीआई के कामकाज में दखल देने के लिए तत्कालीन कानून मंत्री की जमकर खिंचाई की। न्यायालय ने पाया कि सीबीआई की रिपोर्ट में मुख्य बातें पलट दी थीं, जो सीधे तौर पर सरकार को राहत पहुंचा रही थीं। न्यायालय की कड़ी टिप्पणी के बाद कानून मंत्री को इस्तीफा देना पड़ा।

नैतिकता का राग अलापने वाली कांग्रेस के नेतृत्व वाली संप्रग सरकार में सीबीआई ने कोयला खदान आवंटन मामले में उद्योगपति कुमार मंगलम बिड़ला और कम से कम दो पूर्व कोयला सचिवों के खिलाफ मामले दर्ज किए थे। भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) के पूर्व प्रमुख सी बी भावे को भी परेशानी का सामना करना पड़ा जब सीबीआई ने कहा कि वह स्टॉक एक्सचेंज की स्थापना के लिए एमसीएक्स का आवेदन मंजूर करने के मामले में उनकी (भावे) भूमिका की जांच कर रहा है। सीबीआई ने 2006 से 2009 के बीच कोयला सचिव रहे एच सी गुप्ता के खिलाफ भी जांच शुरू की थी। गुप्ता बाद में भारतीय प्रतिस्पर्द्धा आयोग के सदस्य बन गए। सीबीआई को उनकी जांच के लिए कंपनी मामलों के मंत्रालय से अनुमति मांगनी पड़ी। गुप्ता को अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा। यह परंपरा जारी है। हालांकि अपनी बात रखने वाले या किसी विषय पर आवाज उठाने वालों के खिलाफ सख्त रुख अपनाने से कोई रास्ता नहीं निकलेगा। इससे इतर राह पर चलकर ही स्वच्छ सरकार एवं प्रशासन का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

कानाफूसी

कौन बनेगा विदेश सचिव?

देश का अगला विदेश सचिव कौन होगा? विजय गोखले ने तत्कालीन विदेश सचिव एस जयशंकर की सेवानिवृत्ति के बाद 28 जनवरी, 2018 को दो वर्ष की तय अवधि के लिए यह पद संभाला था। जयशंकर राजनीति में चले गए और विदेश मंत्री बन गए। बहरहाल गोखले का कार्यकाल जनवरी 2020 के आखिर में समाप्त हो रहा है। उनके बाद इस पद के तीन दावेदार हैं लेकिन सबसे तगड़े दावेदार अमेरिका में भारत के राजदूत हर्षवर्धन श्रृंगला हैं। उन्हें जयशंकर का करीबी माना जाता है लेकिन कई लोग कह रहे हैं कि वह शायद अमेरिका में रहें क्योंकि वह अमेरिका के साथ अंतरिम मुक्त व्यापार संधि पर चर्चा में शमिल हैं। दूसरे प्रत्याशी हैं संयुक्त राष्ट्र में भारत के स्थायी प्रतिनिधि सैयद अकबरुद्दीन। परंतु वह सन 1985 बैच के विदेश सेवा अधिकारी हैं और उन्हें अप्रैल 2020 में सेवानिवृत्त होना है। तीसरी प्रत्याशी रुचि घनश्याम 1982 बैच की हैं लेकिन उन्हें भी 2020 में ही सेवानिवृत्त होना है। श्रृंगला हालांकि 1984 बैच के हैं लेकिन वह सन 2022 में सेवानिवृत्त होंगे। अकबरुद्दीन दोनों के कनिष्ठ हैं। बहरहाल यदि अकबरुद्दीन को विदेश सचिव बनाया गया तो दो अन्य अधिकारियों टीएस तिरुमूर्ति (आर्थिक मामलों के सचिव) और विजय ठाकुर सिंह (सचिव-पूर्व) का समायोजन करना होगा क्योंकि दोनों अकबरुद्दीन से वरिष्ठ हैं।

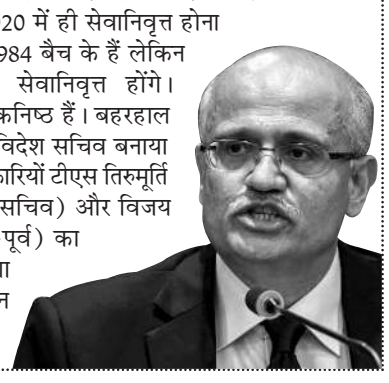

आपका पक्ष

औषधीय पौधों का संरक्षण आवश्यक

समय के साथ तेजी से बदलती जीवन शैली मानव शरीर को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रही है। फास्ट फूड संस्कृति के प्रचलन के कारण लोगों के शरीर में आवश्यक पोषक तत्त्वों की कमी होती जाती है। इस वजह से शरीर की आवश्यक रोग प्रतिरोधक क्षमता में लगातार गिरावट देखी जा रही है। यही कारण है कीटनाशकों की अधिकता के माध्यम से उगी सब्जियों एवं मिलावटी खाद्य पदार्थों के सेवन के कुप्रभावों से लोग आसानी से रोग के शिकार हो रहे हैं। ऐसे विपरीत वातावरण में निरोग रहना सबसे बड़ी चुनौती बनती जा रही है। इन सबके बीच राहत देने वाला तथ्य यह है कि शरीर को मजबूत प्रदान करते हुए किसी भी प्रकार के टॉक्सिन के प्रभाव से मुक्त करने के उपचार आयुर्वेद में उपलब्ध है। आयुर्वेद में बहुत से औषधीय पौधों की उपयोगिता एवं प्रमाणिकता प्रयोगों द्वारा सिद्ध जा चुकी है। साधारण बुखार एवं जुकाम से लेकर पथरी, हृदयरोग, कैंसर जैसी गंभीर बीमारियों को भी ठीक करने की असाधारण क्षमता रखने वाली औषधीय वनस्पतियां पाई जाती हैं। अधिकतर औषधीय पौधे हमारे आसपास ही पाए जाते हैं। इन पौधों

औषधीय पौधों की गुणवत्ता को देखते हुए आम लोगों को भी इसे अपनी जीवनशैली में शामिल करना चाहिए

का लाभ प्राप्त करने के लिए इन्हें योजनाबद्ध तरीके से उगाने की आवश्यकता होती है। देश के विभिन्न हिस्सों में संस्थागत रूप से हर्बल गार्डन की स्थापना की गई है। जहां के परिसर में विभिन्न प्रकार के औषधीय पौधे जैसे गिलोय(गुरुद), एलोविरा, नागकेसर, शतावर, मरोड़फल्ली, अर्जुन (कहुआ), बेल, नीम, भुई नीम, हर्रा, बहेरा, बबूल मुसली, तेज पत्ता, कियोकंद, भूंई आंवला, काली हल्दी, हड़जोड़, पुनर्नवा, प्राचीन आंवला और तेज बल के पौधों का रोपण किया जाता है। उगाए गए पादपों की श्रृंखला में कुछ दुर्लभ प्रजाति के पौधे भी सम्मिलित होते हैं। अर्जुन वृक्ष की छाल हृदय रोग के उपचार में काम आती है। हर्रा खांसी फोड़े जैसी व्याधियों में काम आता है। बहेरा बाल झड़ने को रोकने में सहायक है। हड़जोड़ का उपयोग टूटी हड्डियों को जोड़ने में किया जाता है। गिलोय, पीलिया के उपचार में व बबूल की छाल कान प्रयोग दांत दर्द के उपचार में किया जाता है। भुई नीम सामान्य ज्वर के साथ साथ मलेरिया के उपचार में कारगर सिद्ध होता है। इसी प्रकार सभी पौधे विलक्षण गुण रखते हैं। पौधों को अलग-अलग गमलों सहित मानक अनुरूप दूरी बनाकर क्यारियों में उगाया जाना चाहिए। पौधे समय के साथ रोगरहित विकसित हों इसके लिए प्रशिक्षित एवं जानकर मालियों द्वारा पौधों की सतत निगरानी की आवश्यकता है। व्यक्तिगत स्तर पर भी औषधीय पौधों को उगाया जा सकता है। इसके लिए घर के आंगन व बाड़ी सहित पक्के मकानों की छत उचित स्थान होते हैं। औषधीय पौधों के महत्त्व एवं उपयोगिता को देखते हुए आम लोगों को इसे अपनी जीवन शैली में शामिल करना चाहिए।

ऋषभ देव पांडेय, जांजगीर चांपा

बिजली पर निर्भर हमारी आधुनिक जीवनशैली

मनुष्य का जीवन बिजली पर निर्भर हो गया है। दैनिक जीवन में बिजली एक जरूरी चीज बन गई है जिसके बिना कोई भी कार्य अधूरा रहता है। घर, कार्यालय, यातायात सब बिजली पर निर्भर है। टीवी से लेकर मोबाइल, कंप्यूटर हर जगह काम करने में बिजली की जरूरत है। बिजली नहीं तो काम, परिवहन, संचार सभी ठप पड़ जाता है। दैनिक जीवन के लिए बिजली की खपत अधिक है लेकिन देश में इसका उत्पादन कम होता है। आज बिजली की अधिक उत्पादन करने की आवश्यकता है। इसका रखरखाव एवं सही वितरण करने की जरूरत है। हम प्राकृतिक ऊर्जा जैसे हवा या सौर ऊर्जा का उपयोग कर रहे हैं तो चिंता का विषय नहीं है। लेकिन बिजली, पेट्रोल, गैस और अन्य ऐसे ईंधन जो हमें बहुत मुश्किल से एवं पैसा व्यय करके मिलता है उनका दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। अत: बिजली के सही उत्पादन एवं उपभोग की आवश्यकता है। बेवजह हम रोशनी न जलाएं, पंखा न चलाएं। इस तरह हम काफी बिजली बचा सकते हैं। आज का युग सचमुच बिजली से चलता है।

हरिओम हंसराज, छपरा

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।